Websites:
http://www.sciencepub.net
http://www.sciencepub.net/researcher

Emails:
editor@sciencepub.net
marslandresearcher@gmail.com

Researcher

MARSLAND PRESS
Multidisciplinary Academic Journal Publisher

Harishankar Parsai's sharp satire

Pinki Chauhan

Research Scholar in Department of Hindi, Barkatullah University, Bhopal, Madhya Pradesh (India)
Email: pinkichauhan0761@gmail.com

Abstract: Today is the death anniversary of satirist Harishankar Parsai, who gave satire the status of a genre in Hindi literature. He was born in Jamani in Hoshangabad district of Madhya Pradesh. Harishankar Parsai was originally a satirical writer. His satire is not only for entertainment, but also draws the attention of the readers towards those weaknesses and anomalies of the society which are making our life difficult.

[Chauhan, P. **Harishankar Parsai's sharp satire**. *Researcher* 2022;14(9):39-41] ISSN 1553-9865 (print); ISSN 2163-8950 (online) http://www.sciencepub.net/researcher. 07. doi:10.7537/marsrsj140922.07.

Tan Dee Doeef.
Herformance: Harishankar; Parsai's; sharp; satire;

हरिशंकर परसाई के तीखे व्यंग्य

सारांश : हिंदी साहित्य में व्यंग्य को विधा का दर्जा दिलाने वाले मूर्धन्य व्यंग्यकार हरिशंकर परसाई की आज पुण्यतिथि है. उनका जन्म मध्य प्रदेश के होशंगाबाद जिले के जमानी में हुआ था. हरिशंकर परसाई मूलत: व्यंग्य -लेखक थे. उनके व्यंग्य केवल मनोरजन के लिए नही है बल्कि, पाठको का ध्यान समाज की उन कमजोरियों और विसंगतियो की ओर आकृष्ट करते हैं जो हमारे जीवन को दूभर बना रही हैं.

परिचय: व्यंग्य सम्राट हरिशंकर परसाई (Harishankar Parsai) की आज बरसी है. हरिशंकर परसाई 22 अगस्त, 1924 को मध्य प्रदेश में होशंगाबाद के जमानी में पैदा हुए. 10 अगस्त, 1995 को उन्होंने इस दुनिया को अलविदा कह दिया. उन्होंने अपनी लेखनी के दम पर व्यंग्य को हिंदी साहित्य में एक विधा के तौर पर मान्यता दिलाने का काम किया.

हरिशंकर परसाई के जीवन परिचय (Harishankar Parsai ka Jivan Parichay) की बात करें तो परसाईजी का शुरूआती जीवन पेशानियों में बीता. मैट्रिक नहीं हुए थे कि उनकी मां की मृत्यु हो गई. इसके बाद असाध्य बीमारी से पिता की भी मृत्यु हो गई. गहन आर्थिक अभावों के बीच चार छोटे भाई-बहनों की जिम्मेदारी परसाई पर आ गई.

जिस तरह आपने-हमने कोरोना महामारी का भनायक रूप देखा, उसी तरह हरिशंकर परसाई ने 'प्लेग' की भयावहता को झेला. उन्होंने अपनी आत्मकथा 'गर्दिश के दिन' में इसका जिक्र भी किया है. इस गर्दिश को परसाईजी ने ताउम्र झेला. तमाम मुश्किलों के बाद उन्होंने अपनी पढ़ाई पूरी की. उन्होंने नागपुर विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम.ए. किया फिर 'डिप्लोमा इन टीचिंग'.

कुछ सालों बाद शाजापुर में एक कॉलेज के प्रिंसिपल नियुक्त होने का प्रस्ताव आया, पर उन्होंने इसे भी अस्वीकार कर दिया और जबलपुर में रहकर स्वतंत्र रूप से लेखन करना स्वीकार किया.

परसाई की रचनाएं (Harishankar Parsai ki Rachna)

व्यंग्य के अलावा हरिशंकर परसाई (Satirist Hari Shankar Parsai) के कहानी संग्रह 'हँसते हैं रोते हैं', 'जैसे उनके दिन फिरे', 'भोलाराम का जीव' उपन्यास 'रानी नागफनी की कहानी', 'तट की खोज', 'ज्वाला और जल' तथा संस्मरण 'तिरछी रेखाएँ' भी प्रकाशित हुए.

हरिशंकर परसाई के व्यंग्य 'शिकायत मुझे भी है'

उनकी रचनाओं में तब की बात और थी, भूत के पाँव पीछे, बेईमानी की परत, वैष्णव की फिसलन, पगडण्डियों का जमाना, शिकायत मुझे भी है, सदाचार का ताबीज, विकलांग श्रद्धा का दौर, तुलसीदास चंदन घिसैं, हम इकउम्र से वाकिफ हैं, जाने पहचाने लोग (व्यंग्य निबंध-संग्रह) शामिल हैं. उनकी रचनाओं के अनुवाद लगभग सभी भारतीय भाषाओं और अंग्रेजी में हुआ. उनकी सभी रचनाएं 'परसाई रचनावली' (Parsai Rachanawali) शीर्षक से छह खंडों में संकलित हैं.

वाणी प्रकाशन (Vani Prakashan) से हरिशंकर परसाई का व्यंग्य संग्रह 'माटी कहे कुम्हार से' प्रकाशित हुआ है. पेश है इस व्यंग्य संग्रह से एक दिलचस्प व्यंग्य '**मुर्दे का मूल्य**

बैलाडिला में मज़दूरों पर गोली चल गयी. मज़दूर छँटनी के विरोध में आंदोलन कर रहे थे.

शांतिपूर्ण आंदोलन कर रहे थे, पैंतालीस दिनों से. इतने दिनों तक शांतिपूर्ण आंदोलन न खदानों के अधिकारियों को अच्छा लग रहा था, न शासन को, न पुलिस को. दो-चार दिनों का शांतिपूर्ण आंदोलन अच्छा लगता है. पैंतालीस दिन कौन धीरज रखे बैठा रहेगा कि अब भगवान की दया से गोली चलाने का शुभ अवसर मिलेगा. आख़िर ऊबकर अधिकारियों ने एक दिन शांतिपूर्ण को अशांतिपूर्ण बना दिया.

हरिशंकर परसाई का व्यंग्य: यह बीमारी-प्रेमी देश है, इसको खुजली बहुत होती है

हरिशंकर परसाई अपने लेखन को एक सामाजिक कर्म के रूप में परिभाषित करते है. वे कहते हैं- सामाजिक अनुभव के बिना सच्चा और वास्तविक साहित्य लिखा ही नही जा सकता. 10 अगस्त, 1995 को परिसाई जी इस दुनिया को रुखस्त कर गए. उनकी पुण्यतिथि पर प्रस्तुत है **वाणी प्रकाशन** ग्रुप से प्रकाशित उनकी पुस्तक '**अपनी अपनी बीमारी**' का एक अंश 'किताबों की दुकान और दवाओं की'-

बाजार बढ़ रहा है. इस सड़क पर किताबों की एक नई दुकान खुली है. और दवाओं की दो. ज्ञान और बीमारी का यही अनुपात है अपने शहर में. ज्ञान की चाह जितनी बढ़ी है उससे दुगनी दवा की चाह बढ़ी है. यों ज्ञान ख़ुद एक बीमारी है. 'सबसों भले विमूढ़, जिनहिं न व्याप जगत गति.' अगर यह एक किताब की दुकान न खुलती तो दो दुकानें दवाइयों की न खोलनी पड़तीं. एक किताब की दुकान ज्ञान से जो बीमारियां फैलाएगी, उनकी काट ये दो दवाओं की दुकानें करेंगी.

पुस्तक-विक्रेता अक्सर मक्खी मारते बैठा रहता है. बेकार आदमी हैज़ा रोकते हैं. क्योंकि, वे शहर की मक्खियां मार डालते हैं. ठीक सामने दवा की दुकान पर हमेशा ग्राहक रहते हैं. मैं इस पुस्तक-विक्रेता से कहता हूं- तूने धंधा गलत चुना. इस देश को समझ. यह बीमारी-प्रेमी देश है. तू अगर खुजली का मलहम ही बेचता तो ज़्यादा कमा लेता. इस देश को खुजली बहुत होती है. जब खुजली का दौर आता है, तो दंगा कर बैठता या हरिजनों को जला देता है. तब कुछ सयानों को खुजली उठती है और वे प्रस्ताव का मलहम लगाकर सो जाते हैं. खुजली सबको उठती है- कोई खुजाकर खुजास मिटाता है, कोई शब्दों का मलहम लगाकर.

मुझे इस सड़क के भाग्य पर तरस आता है. सालों से देख रहा हूं, सामने के हिस्से में जहां परिवार रहते थे वहां दुकानें खुलती जा रही हैं. परिवार इमारत के पीछे चले गए हैं. दुकान लगातार आदमी को पीठे ढकेलती जा रही है. दुकान आदमी को ढांकती जा रही है. यह पहले प्रसिद्ध जनसेवी स्वतंत्रता संग्राम सेनानी दुर्गा बाबू की बैठक थी. वहां अब चूड़ियों की दुकान खुल गई है. दुर्गा बाबू आम सड़क से गायब हो गए. यों मैंने बहुत-से क्रांतिवीरों को बाद में भ्रांतिवीर होते देखा है. अच्छे-अच्छे स्वातंत्र्य शूरों को दुकानों के पीछे छिपते देखा है. मगर दुर्गा बाबू जैसे आदमी से ऐसी उम्मीद नहीं थी कि वे चूड़ियों की दुकान के पीछे छिप जाएंगे.

दवा-विक्रेता मेरा परिचित है. नमस्ते करता है. कभी पान भी खिलाता है. मैं पान खाकर फ़ौरन किताब की दुकान पर आ बैठता हूं. उसे हैरानी है कि मैं न चलनेवाली दुकान पर क्यों बैठता हूं. उसकी चलनेवाली दुकान पर क्यों नहीं बैठता? चतुर आदमी हमेशा चलनेवाली दुकान पर बैठता है. लेकिन अपना यह रवैया रहा है कि न चलनेवाली दुकान पर बैठे हैं. या जिस दुकान पर बैठे हैं उसका चलना बंद हो गया है. साथ के बहुत-से लोग चलनेवाली दुकानों पर बैठते-बैठते उनके मैनेजर हो गए हैं. मगर अपनी उजाड़ प्रकृति होने के कारण अभी सेल्समैन तक बनने का जुगाड़ नहीं हुआ.

दवा-विक्रेता हर राहगीर के बीमार होने की आशा लगाए रहता है. मेरे बारे में भी वह सोचता होगा कि कभी यह बीमार पड़ेगा और दवा खरीदने आएगा. मैं उसकी ख़ातिर 6 महीने बीमार पड़ने की कोशिश करता रहा मगर बीमारी आती ही नहीं थी. मैं बीमारियों से कहता- तुम इतनी हो. कोई आ जाओ न. बीमारियां कहतीं- दवाओं के बढ़े दामों से हमें डर लगता है. जो लोग दवाओं में मुनाफ़ाख़ोरी की निंदा करते हैं, वे समझें कि महंगी दवाओं से बीमारियां डरने लगी हैं. वे आती ही नहीं. मगर दवाएं सस्ती हो जाएं तो हर किसी की हिम्मत बीमार पड़ने की हो जाएगी. जो दवा में मुनाफ़ाख़ोरी करते हैं वे देशवासियों को स्वस्थ रहना सिखा रहे हैं. मगर यह कृतघ्न समाज उनकी निंदा करता है.

आखिर मैं बीमार भी पड़ा लेकिन तब जब बीमारियों को विश्वास हो गया कि मेरे डॉक्टर मित्र मुझे 'सैम्पल' की मुफ़्त दवाओं से अच्छा कर लेंगे.

बीमार पड़ा तो एक ज्ञानी समझाने लगे- बीमार पड़े, इसका मतलब है, स्वास्थ्य अच्छा है. स्वस्थ आदमी ही बीमार पड़ता है. बीमार क्या बीमार होगा. जो कभी बीमार नहीं पड़ते, वे अस्वस्थ हैं. यह बात बड़ी राहत देनेवाली है.

बीमारी के दिनों में मुझे बराबर लगता रहा कि वास्तव में स्वस्थ मैं अभी हुआ हूं. अभी तक बीमार नहीं पड़ा था तो बीमार था. बीमारी को स्वास्थ्य मान लेनेवाला मैं अकेला ही नहीं हूं. पूरा समाज बीमारी को स्वास्थ्य मान लेता है. जाति-भेद एक बीमारी ही है. मगर हमारे यहां कितने लोग हैं जो इसे समाज के स्वास्थ्य की निशानी समझते हैं. गोरों का रंग-दंभ एक बीमारी है. मगर अफ्रीका के गोरे इसे स्वास्थ्य का लक्षण मानते हैं और बीमारी को गर्व से ढो रहे हैं. ऐसे में बीमारी से प्यार हो जाता है. बीमारी गौरव के साथ भोगी जाती है. मुझे भी बचपन में परिवार ने ब्राह्मणपन की बीमारी लगा दी थी, पर मैंने जल्दी ही इसका इलाज कर लिया.

मैंने देखा है लोग बीमारी बड़ी हंसी-ख़ुशी से झेलते हैं. उन्हें बीमारी प्रतिष्ठा देती है. सबसे ज़्यादा प्रतिष्ठा 'डायबिटीज' से मिलती है. इसका रोगी जब बिना शक्कर की चाय मांगता है और फिर शीशी में से एक गोली निकालकर उसमें डाल लेता है तब समझता है, जैसे वह शक्कर के कारख़ाने का मालिक है. एक दिन मैं एक बंधु के साथ अस्पताल गया. वे अपनी जांच इस उत्साह और उल्लास के साथ कराते रहे, जैसे लड़के के लिए लड़की देख रहे हों. बोले-चलिए, ज़रा ब्लड शुगर दिखा लें. ब्लड शुगर देख ली गई तो बोले-ज़रा पेशाब की जांच और करवा लें. पेशाब की जांच कराने के बाद बोले-लगे हाथ कार्डियोग्राम और करा लें. एक से एक नामी बीमारी अपने भीतर पाले थे, मगर ज़रा भी क्लेश नहीं. वे बीमारियों को उपलब्धियों की तरह संभाले हुए थे. बीमारी बरदाश्त करना अलग बात है, उसे उपलब्धि मानना दूसरी बात. जो

बीमारी को उपलब्धि मानने लगते हैं, उनकी बीमारी उन्हें कभी नहीं छोड़ती. सदियों से अपना यह समाज बीमारियों को उपलब्धि मानता आया है और नतीजा यह हुआ है कि भीतर से जर्जर हो गया है मगर बाहर से स्वस्थ होने का अहंकार बताता है.

मुझे बीमारी बुरी लगती है. बरदाश्त कर लेता हूं, मगर उससे नफरत करता हूं. इसीलिए बीमारी का कोई फ़ायदा नहीं उठा पाता. लोग तो बीमारी से लोकप्रिय होते हैं, प्रतिष्ठा बढ़ाते हैं. एक साहब 15 दिन अस्पताल में भर्ती रहे, जो सार्वजनिक जीवन में मर चुके थे, तो जिन्दा हो गए. बीमारी कभी-कभी प्राणदान कर जाती है. उनकी बीमारी की ख़बर अख़बार में छपी, लोग देखने आने लगे और वे चर्चा का विषय बन गए. अब चुनाव लड़ने का इरादा रखते हैं. वे तब तक अस्पताल से नहीं गए जब तक एक मंत्री ने उन्हें नहीं देख लिया. डॉक्टर कहते-अब आप पूर्ण स्वस्थ हैं! घर जाइए. वे कहते- डॉक्टर साहब, दो-चार दिन और रेस्ट ले लूं. फिर मुझसे पूछते- क्यों, भैयाजी कब आनेवाले हैं. मैं देखता, उनके चेहरे पर स्वस्थ हो जाने की बड़ी पीड़ा थी. ऐसी धोखेबाज़ बीमारी, कि मिनिस्टर के देखने के पहले ही चली गई. निर्दय, कुछ दिन और रहती तो तेरा क्या बिगड़ता.

1.

बीमारी से चतुर आदमी कई काम साधता है. एक साहब मामूली-सी बीमारी में ही अस्पताल में भर्ती हो गए. उन्हें कुछ लोगों से उधारी वसूल करनी थी और कुछ लोगों से काम कराने थे. अस्पताल से वे चिट्ठी लिखने लगे- प्रिय भाई, अस्पताल से लिख रहा हूं. बहुत बीमार हूं. बड़े संकट की घड़ी है. चलाचली की वेला है. आप रुपये भेज दें तो बड़ी कृपा हो. आधे-से-अधिक सहृदयों ने उन्हें रुपये भेज दिए. बाकी ने सोचा-जब चलाचली की वेला है तो कुछ दिन देख ही लिया जाए. सिधार जाएं तो पैसे बच जाएंगे. एक मामूली बीमारी से उन्होंने दया जगाकर कई काम करा लिए.

सन्दर्भ :-

[1]. राजपाल (2009) हरिशंकर परसाई: अपनी अपनी बीमारी, 2 भाग – 15-78
[2]. हरिशंकर परसाई: शिकायत मुझे भी है, राजकमल प्रकाशन, 2004, भाग-8, 12-19
[3]. हरिशंकर परसाई: ऐसा भी सोचा जाता हैं, राजकमल प्रकाशन नयी दिल्ली, द्वितीय संस्करण 1994
[4]. हरिशंकर परसाई: दो नाक वाले लोग, वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण 1983

5.22.29022